International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 28-07-2021, Accepted: 11-08-2021, Published: 28-08-2021
Volume 7; Issue 4; 2021; Page No. 136-138

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास साहित्य की विशेषताँए

डॉ. तबस्सुम खान[1], स्मित अवस्थी[2]
[1] हिन्दी विभागाध्यक्ष, श्री सत्यसाईं विश्व विध्यालय, सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत
[2] शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, श्री सत्यसाईं विश्व विध्यालय, सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत

सारांश
मनुष्य जाति ने जब अपने जीवन और समुदाय का व्यवस्थित करने की कोशिश की तो इस कोशिश के परिणाम स्वरूप समाज का निर्माण हुआ। यद्यपि समाज की परिभाषा के संबंध में विभिन्न विचार और मत है किन्तु मोटे रूप में समाज जीवन और जीवनशैली, जीवन पद्धति, समुदाय और महत्वाकांक्षाओं को सुव्यवस्थित, क्रमबद्ध करने तथा उसे दिशा और आकार देने के लिये निर्मित किया गया। मनुष्य समाज को माने या न माने, रहना उसे समाज में ही पड़ता है। इसी समाज का आत्मकथा विधा से प्रगाढ़ संबंध है। बिना समाज को समझे हम आत्मकथा विधा नहीं समझ सकते हैं।
समाज में नर–नारी को उनकी क्षमताओं तथा शक्तियों के आधार पर कार्य दिया गया। दोनों को समान अधिकार व दर्जा दिया गया। प्रकृति ने दोनों के प्रति समान व्यवहार रखा किन्तु धीरे–धीरे नर नारी पर हावी होने लगा और यही से दोयम दर्जे का प्रारम्भ हुआ। समाज पुरूष प्रधान बनने लगा और स्त्री पुरूष के अधीन होने लगी। यही से स्त्री के जीवन में विसंगतियों का आगमन हुआ। यही विसंगतियां आत्मकथाओं में चित्रित होन लगी और महिला आत्मकथाओं का जन्म हुआ।
आत्मकथा विधा का प्रारंभ कहां से होता हैं? यह भी देखना होगा। जब साहित्य का जन्म हुआ त बवह समुदाय की वीरता और वैभव को प्रदर्शित करने का माध्यम रही। धीरे–धीरे जब तमाम कलाओं की तरह साहित्य ने भी सूक्ष्मता की ओर बढ़ाना शुरू किया तो ''मनोदशा'' और ''मन की बात'' साहित्य में स्थान लेने लगा। साहित्य मन का आईना बन गया जिसमें वो सब कुछ दिखाने लगा जो किसी विज्ञान, यंत्र, उपकरण या एक्स–रे मशीन से नहीं देखे जा सकते थे जिसकी शुरूआत शक्ति से हुई। ईश्वर के प्रति ''मन के भाव'' प्रदर्शित होने लगा। फिर श्रृंगार का समय आया तो ''मनोवृत्तियां'' साहित्य का स्थान पाने लगी। फिर समय ''मनोविकारों'' का आया और तमाम पुराने–नये विचार साहित्य का विषय बनने लगे। फिर समय विचारणीय बिन्दु का आया और तमाम विचारक सामने आये। सबसे महत्वपूर्ण समय ''मनोदशाओं'' का आया और मन की दशायें जो जीवन, समाज, परम्पराओं, निराशाओं, प्रेम में असफलता से जन्मी थी साहित्य की आच्छादित करने लगी। यही आच्छादान आत्मकथाओं के बीज बिन्दु है। मेरे विचार से आत्मकथा विधा को दिशा छायावाद से मिली है, क्योंकि आत्मकथाओं (खास तौर पर महिलाओं की) में जीवन विसंगतियों से उपजी परिस्थितियों और स्थितियों का जैसा वर्णन किया है। कुछ–कुछ ऐसे ही सर्वप्रथम हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम छायावाद में सामने आया है। महादेवी, निराला का जीवन संघर्ष ही उनका साहित्य बना है।

मूलशब्द: मैत्रेयी पुष्पा, उपन्यास साहित्य

प्रस्तावना
मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास साहित्य की प्रमुख विषेषता आंचलिकता है। मैत्रेयीजी बुदेलखण्ड की है। इसलिए उनके साहित्य बुदेलखंडिय आचार विचार ,रहन –सहन रिती रिवाज आदि का रोचक विवेचन मिलता है। बेतवा बहती रही उपन्यास में मैत्रेयी जी ने बुदेलखण्डकी स्त्रियों की दैनिक व्यथा तथा ग्रामीण जीवन के संघर्ष को व्यक्त किया है एवं उपन्यास इदन्ममम् में बुंदेलखझण्ड अंचल के ग्राम स्यामली व सोनपुरा के ग्रामीण को चित्रित किया है। '' लेखिका ने एक ओर सोनपुरा के स्यामली के लोक जीवन की जीवन्त धड़कने प्रस्तुत कर तमाम राति निवाजों के साथ विन्ध्य के अंचल को साकार किया है वही दुसरी ओर भाव को बुंदेलखण्ड का स्वरुप पहनाकर सोने पे सुहागा मिला दिया है।'' चाक उपन्यास में भी बुदेलखण्ड के लोक जीवन और वहॉ के स्त्री पुरुष संबंधो की व्यथा को चित्रित किया है। उपन्यास स्मृति देष भी एक ग्रामीण नारी प्रधान होना भी है। इनके उपन्यास नारी पर केन्द्रित है। स्मृतिदंष की नायीका भुवन जो परिवार वालो के कारण अर्धविक्षिप्त युवक के साथ ब्याह दी जाती है फिर भी वह कर्तव्य निभाती है। वह अपनी सेवा से पति को ठीक कर देती है और अंत मे मृत्यु प्राप्त करती है। इसी प्रकार बेतवा बहती रही उपन्यास की नयिका उर्वषी जवानी में ही विधवा हो जाती है एवं बाद मे उसका विवाह प्रौढ़ व्यक्ति से हो जाता है परन्तु अंत में वह भी मृत्यु को प्राप्त होती है। इदन्ममम् की नायिका मंदाकिनी जो संघर्षरत होकर भी अपने उद्देष्य में सफल होती है। चाक उपन्यास की नायिका सारंद अकेली होकर भी पुरानी परंपरा को तोड़ने का कार्य करती है और अंत में सफल हो जाती है। इस प्रकार लेखिका मैत्रेयी जी के उपन्यास की विषेषता नारी प्रधानता है।
मैत्रेयीजी ने अपने उपन्यासों मे नारी की दयनीय अवस्था का चित्रण किया है। स्त्रीयों का शोषण उन पर होने वाले अत्याचार एवं परंपरागत रुढ़ियो परंपराओ को मानने के लिये विवेष करना ,परिवार के लिए खुद की बली देना, जैसी समस्याओ पर मैत्रेयी जी के उपन्यास का विषय केन्द्रित है । इस तरह लेखिका ने अपने उपन्यासों के माध्यम से नारी जाती की समस्याऐं ग्रामीण वर्ग की समस्याओं को उकेरा है। उन्होने अपने उपन्यासों में स्त्रियों की दुरावस्था गांव मे भ्रष्ट होता पंचायतराज, गांव की कुटिल राजनीति, गरीबों का शोषण, किसानों की समस्या, यौन प्रताड़ना, धर्म निरपेक्षता, आदि समस्याओं को अंकित ही नही किया बल्कि पात्र चरित्रों के माध्यम से उनका अंत करने का प्रयास भी उपन्यासों मे किया है। मैत्रेयी जी ने अपने उपन्यासो में औरतों की सहनषीलता को ही नही उनकी लड़ाई और संघर्ष को भी अपने तरीके से दिखाने का प्रयास किया है। इनके उपन्यासों

मे ग्रामीण जीवन का सहज सरल चित्रण है । इन्होने ग्रामीण जीवन की अनुकुल व प्रतिकुल परिस्थितियों का वर्णन किया है । साथ ही गांव में आधुनिक खेती के उपकरणों की कमी एवं अस्पताल का ना होना भी दर्षाया है। इनके उपन्यासों में बुंदेलखंण्डी ठेट भाषा का प्रयोग सर्वत्र मिलता है। उन्होनें बुंदेलखण्डी लोक भाषा से यर्थाथ चित्रण को प्रभावषाली बना दिया है। इनकी भाषा गंभीर व प्रसंगानुकुल है । लेखिका ने तरोडिया, राछरी, मोंडी, लरका, आदि जैसे शब्दो को अपनाया है । इनकी भाषा के दो रंग है।

1. स्वाभाविक बुंदेलखण्डी
2. खड़ी बोली के शब्दों जो बुंदेलखण्डी का रुप ले लेते है। मैत्रेयीजी के उपन्यासों का एक सार्थक पक्ष उसके ग्राम रंजित मुहावरे, पद, बांध, संवाद प्रमुख कथापट, प्रसंगों की दृष्यलब्धता अनेक ऐसी विषिषटताएँ है जो उन्हे सभी कथाकारों से और मुख्यतः स्त्री कथाकारों से अलग करती है।''लेखिका ने अपने समाजबोधी व क्रांतीकारी लक्ष्य को व्यक्त करने में असाधारण बुंदेलखण्डी भाषाधिकार का परिचय दिया है। पात्रो स्थितियों मनस्थितियों के अनुरुप शब्दों वाक्यों के चयन में सहजता दिखाई देती है । विंध्य अंचल के बहुत से शब्द ताजगी और आत्मीयता के साथ भाषा में बस गए है जैसे सिर्रिन, बॉवरी, मातोन, डुकरो, मताई, बिन्नू, पक्यात, सुभाय आदि शब्द उनके भाषाधिकार को पुष्ट करते है।

सूचना सप्रेषण

ऐसा पाया गया है कि हमें प्राप्त आलेखों का प्रेषण बिना पूर्व वाचन अथवा परीक्षण के होता है जिससे कोई न कोई त्रुटि की संभावना रहती है। ''षोधायन'' एक रिसर्च जर्नल और संदर्भित पुस्तिका होने के कारण इसमें दी जाने की जानकारियाँ विषुद्ध और सही होना नितांत आवष्यक है। अतः विज्ञजनों से अनुरोध है कि अपने आलेखों को प्रेषित करने के पूर्व उसे ठीक तरह से पढ़ ले, जिनसे किसी प्रकार की कोई त्रुटि न रह जायें । साथ ही आलेखों के शब्द, वाक्यांष आदि का भी ठीक तरह परीक्षण ले कर ले। समस्त लेखकों एवं शोधार्थियों से अनुरोध है कि वे आलेख प्रेषित करते समय अपना सम्पर्क क्रमांक अथवा मोबाईल नम्बर एवं पूर्ण पता अवष्य प्रेषित करें । हिन्दी साहित्य के संदर्भ में आत्मकथाओं का समाज शास्त्र डॉ. गरिमा कंचन

मनुष्य जाति ने जब अपने जीवन और समुदाय का व्यवस्थित करने की कोशिश की तो इस कोशिश के परिणाम स्वरूप समाज का निर्माण हुआ। यद्यपि समाज की परिभाषा के संबंध में विभिन्न विचार और मत है किन्तु मोटे रूप में समाज जीवन और जीवनशैली, जीवन पद्धति, समुदाय और महत्वाकांक्षाओं को सुव्यवस्थित, क्रमबद्ध करने तथा उसे दिशा और आकार देने के लिये निर्मित किया गया। मनुष्य समाज को माने या न माने, रहना उसे समाज में ही पड़ता है। इसी समाज का आत्मकथा विधा से प्रगाढ़ संबंध है। बिना समाज को समझे हम आत्मकथा विधा नहीं समझ सकते हैं।

समाज में नर–नारी को उनकी क्षमताओं तथा शक्तियों के आधार पर कार्य दिया गया। दोनों को समान अधिकार व दर्जा दिया गया। प्रकृति ने दोनों के प्रति समान व्यवहार रखा किन्तु धीरे–धीरे नर नारी पर हावी होने लगा और यही से दोयम दर्जे का प्रारम्भ हुआ। समाज पुरूष प्रधान बनने लगा और स्त्री पुरूष के अधीन होने लगी। यही से स्त्री के जीवन में विसंगतियों का आगमन हुआ। यही विसंगतियां आत्मकथाओं में चित्रित होन लगी और महिला आत्मकथाओं का जन्म हुआ।

आत्मकथा विधा का प्रारंभ कहां से होता हैं? यह भी देखना होगा। जब साहित्य का जन्म हुआ त बवह समुदाय की वीरता और वैभव को प्रदर्शित करने का माध्यम रही। धीरे–धीरे जब तमाम कलाओं की तरह साहित्य ने भी सूक्ष्मता की ओर बढ़ाना शुरू किया तो ''मनोदशा'' और ''मन की बात'' साहित्य में स्थान लेने लगा। साहित्य मन का आईना बन गया जिसमें वो सब कुछ दिखाने लगा जो किसी विज्ञान, यंत्र, उपकरण या एक्स–रे मशीन से नहीं देखे जा सकते थे जिसकी शुरूआत शक्ति से हुई। ईश्वर के प्रति ''मन के भाव'' प्रदर्शित होने लगा। फिर श्रृंगार का समय आया तो ''मनोवृत्तियां'' साहित्य का स्थान पाने लगी। फिर समय ''मनोविकारों'' का आया और तमाम पुराने–नये विचार साहित्य का विषय बनने लगे। फिर समय विचारणीय बिन्दु का आया और तमाम विचारक सामने आये। सबसे महत्वपूर्ण समय ''मनोदशाओं'' का आया और मन की दशायें जो जीवन, समाज, परम्पराओं, निराशाओं, प्रेम में असफलता से जन्मी थी साहित्य की आच्छादित करने लगी। यही आच्छादान आत्मकथाओं के बीज बिन्दु है। मेरे विचार से आत्मकथा विधा को दिशा छायावाद से मिली है, क्योंकि आत्मकथाओं (खास तौर पर महिलाओं की) में जीवन विसंगतियों से उपजी परिस्थितियों और स्थितियों का जैसा वर्णन किया है। कुछ–कुछ ऐसे ही सर्वप्रथम हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम छायावाद में सामने आया है। महादेवी, निराला का जीवन संघर्ष ही उनका साहित्य बना है। जैसा कि, नन्द दुलारे बाजपेई ने लिखा है–''कि आत्मकथा तो गीति काव्य की भी अपेक्षा अधिक व्यक्तिगत है। आत्मकथा वे इस अन्यन्त व्यक्तिगत विषय से ''अहं'' से सब कुछ खींच लेता तो और भी कठिन है।''

आत्मकथा विधा का अन्य विधाओं से बड़ा अन्तर है। अन्य साहित्य की विधायें यथा कथा–कहानी, उपन्यास, नाटक आदि में वह सब चित्रित होता है जिसकी कल्पना की जाये या जो जिया गया हो या सोचा गया हो अर्थात् अन्य विधाओं में विचार, कल्पना, यर्थात, मनोदशाओं आदि सभी का प्रयोग कर सकते है या किसी एक का भी। किन्तु आत्मकथा में ऐसा नहीं है आत्मकथा में लेखक जो जीता है, सोचता है, सहता है, देखता है उसका वर्णन होता है अर्थात् यथार्थ और यथार्थ पर अपने विचार और मनोदशाओं को आत्मकथाओं में प्रस्तुत कर सकते है। उसमें कल्पना के पंख नहीं फैल सकते हैं। भविष्य के प्रति विचार रख सकते है किन्तु भविष्य की रंगीन छांव में नहीं खो सकते है। इसलिये ईमानदारी पूर्ण लेखन आत्मकथा लेखन की पहली शर्त हैं प्रभाखेतान ने सही लिखा है–''ईमानदार लेखन को मैं आत्मकथा की पहली शर्त कहूंगी। दुरूग्राहपूर्ण लेखन से दूरी और निष्पक्ष लेखन आत्मकथा की अन्य शर्त है। आत्मकथायें आत्मपरक होती है। जैसा ''आत्मकथा मूलतः आत्मपरकविधा है व्यक्ति के अन्दर छिपा अदृश्य संसार पाठकों के समक्ष उदघाटित होता है और इस कार्य को सम्पन्न करता है स्वयं वह व्यक्ति/अतैव इसमें अनुमान और कल्पना का कोई स्थान नहीं।'' आत्मकथायें दो धाराओं में एक साथ चलती है–वाह्य चित्रण और आंतरिक उदघाटन। वाहय जीवन में आशा–निराशा, जय–पराजय, संतुष्टि–असंतुष्टि आदि का वर्णन करता है। वही इनका विश्लेषण और मन स्थिति का चित्रण आन्तरिक उद्घाटन में लेखक करना चाहता है। आत्मकथा एक साथ दोनों को संबोधित होती है। इस तरह दोनों को संबोधित होती है। इसतरह रचनाकार के व्यक्तित्व और उसके समाज के व्यक्तित्व के बीच लगाव और तनाव की द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया में वह संभव होती है।'' पुरूष आत्मकथाओं में वाहय जीवन प्रधान और स्त्री आत्मकथाओं में आंतरिक जीवन की प्रधानता देखेने को मिलती है क्योंकि स्त्रियों पुरूषों की अपेक्षा सामाजिक और पारिवारिक दशा को अधिक झेलती है अतः मन स्थिति यहां व्यापक रूप में दिखती है। दोयम दर्जे की व्यथा–कथा ज्यादा मार्मिक दिखती है। आत्मकथा जब दलित की हुई तो उसमें सामाजिक व्यथा का तीखा दंश सामने आता है उसें यदि दलित महिला की आत्मकथा है तो व्यथा ज्यादा मार्मिकता होगी क्योंकि महिला और दलित दोनों की मार ज्यादा गहरी और सूक्ष्म है।

आत्मकथाओं का समाजशास्त्र ज्यादा व्यापक और सूक्ष्म दोनों है क्योंकि आत्मकथायें सबसे ज्यादा गहराई से समाज से जुड़ी हैं। समाज जीवन को व्यवस्थिति तथा मन पर अंकुश लगाने वाला होता है यह व्यवस्थापन और अंकुश दोनों ही मनुष्य की इच्छाओं, आकांक्षाओं, महत्वाकांक्षाओं पर चोट करती है। नियंत्रण करता है और तमाम अवरोधक उत्पन्न करता है जिससे संतुष्टि और असंतुष्टि दोनों ही पैदा होती है। यदि संतुष्टि हो तो कथा जय और विजय की गाथा होगी। असंतुष्टि है तो सामाजिक जीवन के प्रति दोष उत्पन्न करेगी। पुरूष आत्मकथायें इसीलिए उनकी विजय गाथा होती है क्योंकि समाज उनको प्रधान स्थान पर रखता है । महिलाओं की स्थिति मूलतः असंतुष्टि की है क्योंकि उसे समाज में स्थान ही दूसरा दिया है जो कि, प्रकृति के नियम के विरूद्ध है। समाज की अधिकांश परम्परायें और कुरीतियां महिलाओं को बंधक बनाने के लिये है। इसलिए महिलाओं की आत्मकथायें समाजशास्त्र का ज्यादा तार्किक और व्यापक विश्लेषण करती है उसकी खामियों का ज्यादा गहरे से उजागर करती है। अन्य विधाओं की अपेक्षा समाज और समाज शास्त्र का जितना ज्यादा अध्ययन और वर्णन आत्मकथा में है अन्य विधाओं में उतना नहीं है। पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की आत्मकथायें इन्हीं परिस्थितियों और सामाजिक स्थितियों के कारण ज्यादा रोचक लगती है। अब तो महिला आत्मकथा लेखिकाओं ने इसे बेबाक चित्रण और अन्तः प्रसंग वर्णन को जोड कर और ज्यादा रोचक बना दिया है। आत्मकथा विधा तटस्थता की मांग करती है और इसी तटस्थता में आत्म मोह, आत्म प्रशंसा और आत्मसत्यता का परित्याग करना पडता है नहीं तो आत्मकथा एक कहानी हो जायेगी जो आत्मकथा ईमानदारीपूर्ण लेखन से दूर हो जायेगी। इसी कमी को दूर करके ही आत्मकथा को सही आकार मिलता है तटस्थता और निर्येवक्तिता की कमी के कारण आत्मकथा वाद विवाद का बड़ा कारण बनी इसीलिये आत्मकथाओं पर आलोचना सबसे ज्यादा होती रही है। जीवन और आत्मकथा में भी बड़ा सूक्ष्म अन्तर है। जीवन लेखक अपने नायक के चरित्र उद्घाटन उतना ही करता है जितना वह जानता है अर्थात् अधिकांश वर्णन या सम्पूर्ण वर्णन वाहय जीवन की घटनाओं पर आधारित होता है जिसे लेखक अपनी दृष्टि से विश्लेषित करना चाहता है। जबकि इसके विपरीत आत्मकथा लेखक वाहय जीवन और आन्तरिक जीवन (मनः स्थिति विचार) का स्वयं दृष्टा होता है अतः स्थिति और मनस्थिति दोनों साथ–साथ चलती है जैसा कि ''आत्मकथा एक विशेष प्रकार की जीवनी है। जीवनी किसी व्यक्ति की अन्य व्यक्ति द्वारा लिखी गयी जीवनी कथा होती है आत्मकथा उस व्यक्ति द्वारा लिखित स्वयं की जीवनी होती है। घनिष्ठतम संबंध होने के बावजूद दोनों विधायें जैविक रूप से भिन्न है। आत्मकथा जीवनी का एक पहलू मात्र नहीं है, जैसा कि, आमतौर पर माना जाता है। इसके विपरीत वह एक स्वतंत्र और कठिन कला रूप हैं।'' आत्मकथा लेखन का त्म ब्वसससमबजपवद प्द ज्तंदुनपसपजल की सोच में गढ़ा जाना चाहिए ताकि स्थितियों और परिस्थितियों का सही और तार्किक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा सके। इस सुधारको आत्मकथा में स्वीकार किया जाना चाहिये क्योंकि आत्मकथायें सिर्फ तथ्यों और घटनाओं का विवरण नहीं है नही तो वो इतिहास बना जाये साहित्य नही। साहित्य तो इतिहास से अलग घटनाओं और तथ्यों का विश्लेषण करता है, सुधार करता है और उसे समाजोन्मुखी और आत्मोन्मुखी बनाता है। इतिहास में सुधारवादी दृष्टि का होता है। दूसरी तरफ आत्मकथा लेखन को बेबाक, अनगल और काल्पनिक घटनाओं के चित्रण से बचना चाहिए। तृतीय बात लेखक को स्वयं भू और अपने सही बताने की दृष्टि से भी दूर होना चाहिये। आत्मकथा लेखन का प्रयोजन मोटे रूप से स्वयं के जीवन दृष्ट को प्रकट करना है, किन्तु डीन इंगे ने आत्मकथा लेखन के अनेक प्रयोजन सामने रखे हैं, जिसमें अपने आचरण व व्यवहार की वकालत, शत्रुओं पर घातक प्रहार, पैसे की माया, बदला लेने का प्रयोजन, आत्मप्रशंसा।'' आत्मकथा विधा पर तमाम मानदण्डों और आक्षेपों के बावजूद यह देखना भी जरूरी होगा कि, क्या यह एक साहित्यिक विधा भी हो और तभी इसका समुचित विश्लेषण हो पायेगा। तभी तो सुमन राजे लिखती है, ''यदि आत्मकथा एक साहित्यिक विधा है तो आलोचना के मानक भी तय करने होंगे। जो आत्मकथायें हमारी हैं उनमें इतनी अधिक विविधता और गद्य की कई विधायें इतनी तरल रूप में मिलती है कि, उन्हें अलगाना कठिन है। आलोचना की दृष्टि से आत्मकथा का केवल आत्मकथा होना काफी नहीं, सामने उसे साहित्य भी होना चाहिये।'' वे हिन्दी आत्मकथा लेखन पर सवाल खड़े करती हैं–''बुनियादी सवाल भी यही से खड़े होते हैं। जिन भाषाओं में आत्मकथाओं की पुष्ट परम्परा रही है, वहां उन्होनें इस तरह के कुछ तर्क तलाशें है और हिन्दी जगत उनसे अपरिचित भी नहीं है लेकिन उनका प्रयोग शायद ही किया गया हो। दूसरा बड़ा सवाल यह है, जिससे बचा नहीं जा सकता कि पुरूषों द्वारा लिखी गयी आत्मकथाओं से महिलाओं द्वारा लिखी गयी आत्मकथायें कितनी भिन्न होती हैं, या होनी चाहिये, कि उनकी श्रेष्ठता के मानक भी अलग हो।'' यह बात सच है कि, आत्मकथा को सिर्फ आत्मकथा होना चाहिये, न कि उपन्यास या कथा। जैसा कि मैत्रेयी पुष्पा लिखती है–''इसे उपन्यास कहूँ या आप बीती........?'' तमाम आत्मकथायें उपन्यास के रूप में लिखी गयी हैं यह इस विधा की कमजोरी को इंगित करता हैं। जैसा कि, आंद्रे मैरिस ने आत्मकथा की सीमाओं को विस्तार से बताया है भूलने की आदत, सौन्दर्य शास्त्रीय आधार लेकर जानबूझकर भूलने का नाटक, ईमानदारी का अभाव, घटनाओं में पारदर्शिता का अभाव, लज्जावश घटनाओं को छिपाना, रक्षात्मक आवरण के लिये, आत्मप्रशंसा, आत्ममोह से ग्रसित होने पर आदि। आंद्रे मैरिस द्वारा लिखी गई ये सीमायें कभी जाने–अनजाने और कभी जानबूझकर आत्मकथाओं में दिखायी पड़ती है, क्योंकि मनुष्य वही सोचना–समझना और देखना व लिखना चाहता है, जो उसे उचित और रूचिकर लगे। मस्तिष्क की सेंसरशिप अपने आप सक्रिय हो जाती है। यद्यपि ऐसा नहीं है कि, सभी आत्मकथायें इससे ग्रसित होती हैं, बहुत सी आत्मकथायें अपनी ईमानदारी और पारदर्शिता के लिये उच्च स्थान पर विराजमान है।''

हिन्दी में लेखिकाओं की आत्मकथायें मराठी से प्रभावित रही हैं। मराठी आत्मकथाओं जैसा जुझारूपन और पंजाबी आत्मकथाओं का जोश, हिन्दी आत्मकथा लेखन के प्रारंभिक दौर में नहीं रहा, किन्तु प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा के साथ ही साहस और बोल्डनेस का नया अध्याय शुरू हुआ। मराठी आत्मकथाओं में लेखिकाओं ने जीवन को संवारने और एक नयी दिशा देने में जो योगदान दिया वैसा ही तर्क और मार्ग हिन्दी आत्मकथा में अब, बहुत बाद में देखने को मिला है। पुरूषों और महिलाओं के जीवन, विचार व दृष्टि की भिन्नता का आत्मकथा लेखन में आना लाजमी है क्योंकि एक तरफ स्वतन्त्रता है, दूसरी तरफ पराधीनता, एक तरफ मुक्त जीवन है दूसरी तरफ बंधन। अतः इनकी अभिव्यक्तियों में भिन्नता आयेगी ही। पुरूषों की आत्मकथायें उपलब्धियों की कथा है तो महिलाओं की वर्जनाओं से मुक्ति की कथा और मुक्ति के तमाम रूपों की अभिव्यक्तियां ये आत्मकथायें नये समाजशास्त्र के साथ प्रस्तुत करती हैं।

संदर्भ सूची

1. आत्मकथा की संस्कृति, पंकज चतुर्वेदी पृ.–20
2. अन्या से अनन्या, प्रभा खेतान, पृ.–4
3. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथायें, डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र, पृ. –11
4. आत्मकथा की संस्कृति, पंकज चतुर्वेदी, पृ.–13
5. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथायें, डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र, पृ. –11
6. ''डायरीज'' निबंध–डीन ईगें, पृ.–17